MR. CHAIRMAN : You might put your question later on. The Minister has finished his reply. (*Interruption*).

SHRI R. K. AMIN : He has to explain the phenomenon of commodity shunting between east and west Europe in Indian commodities.

SHRI MOHD. SHAFI QURESHI : So far as the switch trade is concerned, I might say this. I think the hon. Member referred to switch trade when the commodity is being shifted from one country to the other. The question is that there are allegations in the press and allegations made by some hon. Members. (*Interruption*).

AN. HON. MEMBER : Running commentary is going on.

MR. CHAIRMAN : I would ask the hon. Member at the back of the Minister not to interrupt.

SHRI MOHD. SHAFI QURESHI : I would request the hon. Members to realise that this is a very delicate problem : to level allegations against any sovereign country without ample proof. We know that there are allegations in the press, about the tourist coffee going from one country to another country. We send it to one country and the allegation is that it is going to another country. We should be very careful in dealing with this matter. We cannot make allegations in the air about a country with which we have got trade relations. If any hon. Member has got specific information that goods meant for a particular destination were not utilised there but were switched on to some other country, then it can be taken up with that particular Government. But I would submit that this is a very delicate matter, because our relations with all countries are very cordial and we do not want any allegation to be made against any country without proper proof. Some goods despatched from India to destinations not specified in the agreement have been confiscated by our port authorities in India and action against defaulters is in progress.

MR. CHAIRMAN : The question is :

"That the Bill be passed".

The motion was adopted.

15.52 hrs.

MOTIONS RE : REPORT OF EDUCATION COMMISSION AND REPORT OF COMMITTEE OF MEMBERS OF PARLIAMENT ON EDUCATION

THE MINISTER OF EDUCATION (DR. TRIGUNA SEN) : Sir, I beg to move :

"That this House takes note of the Report of the Education Commission 1964—66, laid on the Table of the House on the 29th August, 1966."

I also beg to move :

"That this House takes note of the Report of the Committee of Members of Parliament on Education (1967)—National Policy on Education, laid on the Table of the House on the 25th July, 1967."

MR. CHAIRMAN : Motions moved :

"That this House takes note of the Report of the Education Commission 1964—66, laid on the Table of the House on the 29th August, 1966."

"That this House takes note of the Report of the Committee of Members of Parliament on Education (1967)—National Policy on Education, laid on the Table of the House on the 25th July, 1967."

There are two amendments.

SHRI YASHPAL SINGH (Dehra Dun) : I beg to move :

That at the end of the motion, the following be added, namely :—

"and is of the opinion that—

(a) the Government should encourage the development and teaching of Hindi, which is the link language of the country;

(b) religious and military training be imparted to students to curb indiscipline among them;

(c) effective steps be taken to implement the recommendations of Dr. Sampurnand Committee on emotional integration;

(d) growth of regional languages be encouraged by producing cheap text-books;

(e) teachings of great saints and religious leaders be included in the text-books; and

(f) vocational training be imparted to students." (1)

SHRI LOBO PRABHU (Udipi) : I beg to move :—

That at end of the motion, the following be added, namely :—

"and is of the opinion that—

(a) consistent with the fundamental rights of parents, it is desirable to leave to the parents both choice of schools and colleges and also the medium of instruction for the education of their children;

(b) consistent with the principles of academic autonomy and freedom, it is desirable that each university should be the judge concerning the medium or media of instruction and that therefore no further action be taken by the Government of India in so far as the medium of instruction in Universities is concerned." (2)

MR. CHAIRMAN : Dr. Govind Das.

डा० गोविन्द दास (जबलपुर) : सभापति जी, ...

SHRI RANGA (Srikakulam) : It was the privilege of the Minister to speak first. Has he passed it on to another Congress member ? If the minister does not want to speak, the speaker from the opposition should be called first.

MR. CHAIRMAN : I was under the impression that this is a resumption of the discussion we had in the last session. Does the minister want to speak ?

DR. TRIGUNA SEN : No, Sir. I want to listen to the debate and reply at the end.

MR. CHAIRMAN : Dr. Govind Das.

SHRI LOBO PRABHU : This is not according to the convention of this House. The convention is, the minister first moves the motion and then the speaker from the opposition is called.

डा० गोविन्द दास : सभापति जी, जिस परम्परा की बात कही जाती है, वह परम्परा किसी बिल या किसी डिमांड के सम्बन्ध में है। यहां इस समय एजूकेशन कमिशन की रिपोर्ट पर विचार होने जा रहा है। इस में ऐसी कोई कनवेन्शन या परम्परा नहीं है।

श्री सा० मो० बनर्जी (कानपुर) : हमेशा से यह परम्परा रही है कि या तो मिनिस्टर साहब किसी डिसक्शन को इनिशिएट करते हैं वर्ना विरोधी दल की तरफ़ से नम्बर वन पार्टी होने की वजह से स्वतंत्र पार्टी या किसी दूसरी पार्टी के सदस्य पहले भाषण देते हैं। मैं कोई गैर जिम्मेदारी की बात नहीं कह रहा हूं। मैं डा० गोविन्द दास की बहुत इज्जत करता हूं भगवान करे, वह जुग जुग जियें, लेकिन मैं समझता हूं कि इस सदन में जो परम्परा चली आ रही है, उस को नहीं तोड़ना चाहिए।

डा० गोविन्द दास : ऐसी कोई परम्परा नहीं है। मैं भी इस सदन की परम्पराओं को जानता हूं। मुझे यहां 44 साल हो गए हैं। सभापति जी, चूंकि आप ने मुझे बुलाया है, इस लिए मुझे बोलने का अधिकार है।

सभापति महोदय : चेयर को यह डिस्क्रीशन है कि वह किसी भी मेम्बर को काल करे। मैं ने डा० गोविन्द दास को काल किया है।

डा० गोविन्द दास : सभापति जी, जिस आयोग का प्रतिवेदन हमारे सामने है, वह अत्यन्त महत्व का आयोग है, लेकिन इस सम्बन्ध में मेरा यह निवेदन है कि स्वतंत्रता के बाद हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति, डा० राधाकृष्णन के नेतृत्व में एक आयोग नियुक्त हुआ था। उस का प्रतिवेदन 1949 में निकला और उस में जो सिफारिशें की गई थीं, उन को

[डा० गोविन्द दास]

सरकार ने स्वीकार भी कर लिया। इस के बावजूद इतना समय बीत जाने पर भी वे सिफ़ारिशें कार्य रूप में परिणत नहीं हुईं।

मेरा मत है कि जो आयोग श्री चागला ने नियुक्त किया, उस की कोई आवश्यकता नहीं थी। उस पर जो खर्च हुआ, वह मेरे मतानुसार फ़िजूल खर्च हुआ और उस में जो लोग नियुक्त हुए, उस में कुछ विदेशी विशेषज्ञ भी थे, जिन को न भारत से कोई वाकफ़ियत थी और न यहां की समस्याओं से कोई दिलचस्पी हो सकती थी। ऐसे लोगों को इस आयोग में नियुक्त कर इतना खर्च करने की क्या आवश्यकता थी, यह बात मेरी समझ के बाहर है।

ग़नीमत इतनी ही हुई कि इस आयोग के अध्यक्ष डा० कोठारी हुए, जिन की देशभक्ति, विद्वता और इस विषय को समझने की शक्ति में कोई मतभेद नहीं हो सकता। डा० कोठारी के अध्यक्ष होते हुए भी जो प्रतिवेदन हमारे सामने है, उस में अंग्रेजी की इतनी सिफारिशें हैं कि मेरी समझ में नहीं आता कि डा० कोठारी के सदृश व्यक्ति के होने पर अंग्रेजी की इतनी सिफारिशें किस प्रकार हुईं। मैं उन सिफ़ारिशों का कुछ खुलासा इस सदन के सम्मुख रखना चाहता हूं।

प्रतिवेदन में कहा गया है कि देश के सब भागों में हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाना सम्भव नहीं है। अखिल भारतीय संस्थाओं में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी बनाए रखना पड़ेगा। अंग्रेजी की पढ़ाई पर स्कूल स्तर से बल देना होगा और स्नातक स्तर की पढ़ाई पूरी करने के लिए विद्यार्थी को अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। विश्वविद्यालय में जाने से पहले अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान आवश्यक है और महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी की पढ़ाई का अच्छा और समुचित प्रबन्ध होना चाहिए।

फिर कहा गया: "अंग्रेजी की पढ़ाई की नींव स्कूल स्तर से ही दृढ़ बनानी पड़ेगी। अंग्रेजी की पढ़ाई के संबंध में अंग्रेजी के विशेषज्ञों द्वारा शिक्षा मंत्रालय को दी गई सिफारिशों का आयोग समर्थन करता है। पूर्व स्नातक स्तर पर अन्य विषयों के साथ साथ अंग्रेजी भी पढ़ाई जावे।"

फिर आगे कहा गया : "यद्यपि उद्देश्य क्षेत्रीय भाषाओं को पढ़ाई का माध्यम बनाना है तथापि इस का अर्थ यह नहीं है कि अंग्रेजी समाप्त कर दी जाये। उच्च स्तर की पढ़ाई के लिए सभी शिक्षक भाषा क्षेत्रीय और अंग्रेजी के द्वारा पढ़ाने योग्य होने चाहिएं और सभी विद्यार्थी क्षेत्रीय भाषा और अंग्रेजी में पढ़ने योग्य होने चाहिएं। स्नातकोत्तर पढ़ाई के लिए तो पढ़ाई का माध्यम कम से कम कुछ समय के लिए, केवल अंग्रेजी को ही रखना पड़ेगा। बड़े बड़े विश्वविद्यालयों में तो केवल अंग्रेजी को ही पढ़ाई का माध्यम रखना पड़ेगा।

इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए अंग्रेजी को ही माध्यम रखना होगा।

सभी क्षेत्रीय भाषाओं में शब्दावली अन्तर्राष्ट्रीय रखी जावे।

मुझे ताज्जुब हुआ जब मैं ने इस प्रतिवेदन को आरम्भ से अंत तक देखने की कोशिश की और इस में अंग्रेजी की, इतनी वकालत मेरी समझ के बाहर बात थी। अंग्रेजी की वकालत के साथ रोमन लिपि तक की वकालत की गई है। जब हमारे संविधान में देवनागरी लिपि को राष्ट्रीय लिपि माना गया है और आज भी हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है, मराठी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है, अन्य भाषाएं अपनी-अपनी लिपि में लिखी जाती हैं, तब रोमन लिपि के बाबत इस आयोग की रिपोर्ट में किस प्रकार कहा गया? कहा गया है "भारतीय भाषाओं के लिए रोमन या देवनागरी लिपि अपनायी जाय।" रोमन लिपि की बात कैसे इस में आई यह मैं कम से कम नहीं समझ पाया।

16 hrs.

पर एक बात देखने योग्य है कि अंग्रेजी की इतनी वकालत होने के बाद भी और कई विदेशी विशेषज्ञ इस आयोग के सदस्य होने पर भी अन्त में उन्होंने भी माना कि अंततोगत्वा शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएं होंगी। आयोग को यह भी मानना पड़ा कि अंग्रेजी के माध्यम रहने से देश की अतुलनीय हानि हो रही है। और संसार के किसी भी देश में ऐसी स्थिति नहीं है। यहां मैं रिपोर्ट के अंग्रेजी वाक्य आप के सामने रखूंगा जो कि आयोग की रिपोर्ट के पृष्ठ 13 पर हैं :

"In no country in the world except India is to be seen this divorce of the language of education from the language of the pupil. Learning through a foreign medium compels the students to concentrate on examining instead of mastering the subject matter."

तो आयोग स्वयं इस बात को स्वीकार करता है कि इस प्रकार विदेशी भाषा के माध्यम से हमारे देश की कितनी हानि हो रही है।

मैं त्रिसूत्री भाषा फारमूला का समर्थक हूं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन जो हिन्दी की सर्वमान्य संस्था है जिस का इस समय मैं अध्यक्ष हूं, उस सम्मेलन ने भी त्रिभाषा फारमूला को स्वीकार किया। यद्यपि हम यह उचित समझते थे कि द्विभाषा फारमूला रहता—एक मातृभाषा और दूसरी राष्ट्रभाषा, लेकिन हमें इस बात का भय था कि यदि द्विभाषा फारमूला रहेगा तो मातृभाषा और अंग्रेजी रहेगी। इसलिए हम ने विवश हो कर, प्रेम से नहीं, उत्साह से नहीं, बल्कि लाचार हो कर त्रिभाषा फारमूला स्वीकार किया कि मातृभाषा रहे, हिन्दी रहे और तीसरी भाषा अंग्रेजी या कोई भी दूसरी भाषा रह सकती है।

कहा जाता है कि हमारे यहां अभी स्नातकोत्तर पढ़ाई के लिए पर्याप्त साहित्य नहीं है। बड़ी गलत बात है यह। अभी सरकार के द्वारा ही कुछ महीने पहले यहां पर एक प्रदर्शनी हुई थी। उस प्रदर्शनी में जिन पुस्तकों का प्रदर्शन किया गया था उन पुस्तकों से यह बात स्पष्ट है कि हमारे यहां पर वैज्ञानिक और शास्त्रीय विषयों पर भी कम से कम हिन्दी में पर्याप्त पुस्तकें हैं। फिर इस संयंत्र में मैं अपना एक अनुभव आप को और बताना चाहता हूं। एक जमाना था जब मैट्रिक का भी माध्यम अंग्रेजी थी और उस समय भी यही दलील दी जाती थी कि हमारे यहां पर मैट्रिक की पढ़ाई का पर्याप्त साहित्य नहीं है। लेकिन आवश्यकता होती तब चीजें उपलब्ध हो जाती हैं। ज्यों ही मैट्रिक में हमारी हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएं माध्यम हुईं त्यों ही सारा साहित्य जो नहीं था, वह छः महीने के अंदर तैयार हो गया। जिस दिन आप हिन्दी और भारतीय भाषाओं को माध्यम बना देंगे उसी दिन एक तो साहित्य पर्याप्त मौजूद है और अगर कोई साहित्य नहीं है तो वह साहित्य छः महीने के भीतर तैयार हो जायगा। मैं इस बात को बार-बार कहता रहा हूं कि साहित्य की तैयारी की एक योजना सरकार को बनानी चाहिए और देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में विद्वानों को एक-एक पुस्तक लिखने के लिए दे देनी चाहिए। उन से ऐग्रीमेंट कर लेना चाहिए और मेरा यह विश्वास है कि एक वर्ष के अन्दर कोई ग्रंथ नहीं है जो तैयार न हो सके। तो साहित्य तैयार नहीं है, इसलिए ऊंची कक्षाओं में हिन्दी और भारतीय भाषाएं शिक्षा का माध्यम नहीं हो सकतीं, यह बड़ी गलत दलील है और अगर थोड़ा बहुत साहित्य नहीं भी है तो इस साहित्य को हम तुरंत तैयार कर लेंगे।

शब्दावली के संबंध में कहा गया है कि जो मैंने अभी पढ़ा था कि वैज्ञानिक विषयों की शब्दावली अन्तर्राष्ट्रीय होनी चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली के सदृश कोई शब्दावली नहीं है। मैं दुनिया के करीब-करीब सब देशों में घूमा हूं। अंग्रेजी की शब्दावली केवल छः देशों में काम में आती है। एक इंग्लैंड

[डा० गोविन्द दास]

में और चार ऐसे देश जो पहले ग्रेट ब्रिटेन के उपनिवेश थे, कैनेडा, आस्ट्रेलिया, साउथ अफ्रीका, न्यूजीलैण्ड और एक अमेरिका । अगर आप फ्रांस में जायें तो वहां की शब्दावली अलग, जर्मनी में जायें तो वहां की शब्दावली अलग, रूस में जायें तो वहां की शब्दावली अलग, चीन में जायें तो वहां की शब्दावली अलग । मैं इन सब देशों में गया हूं और मैं कहना चाहता हूं कि अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली बड़े से बड़ा धोखा है । अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली के सदृश कोई चीज नहीं है । जहां तक वैज्ञानिक शब्दावली का संबंध है हमारे पड़ोसी देश श्याम में, आप शायद जानते होंगे, मैंने खुद वहां जा कर देखा है, वहां पर वैज्ञानिक शब्दावली संस्कृत से ली गई है । तब अपने यहां पर हम अपनी ऐसी शब्दावली न बना सकें जो समस्त भारतीय भाषाओं में उपयुक्त हो सके, और यह शब्दावली संस्कृत से आये, यह क्यों नहीं हो सकता यह मेरी समझ में नहीं आता फिर शब्दावली बनाते-बनाते हमारे यहां 17 वर्ष हो गए । मैं यह तो नहीं कहता कि इन 17 वर्ष में कोई काम नहीं हुआ लेकिन मैं यह जरूर कहना चाहता हूं कि इन 17 वर्षों में उतना काम नहीं हुआ, उस तरह की शब्दावली तैयार नहीं हो पायी कि जिस प्रकार की होनी चाहिए थी ।

एक बात और कही जाती है कि हमारी शिक्षा का जो स्तर है, स्टैंडर्ड है, वह गिरता जा रहा है । क्या आप समझते हैं कि अगर अंग्रेजी इस देश की शिक्षा का माध्यम रही और हमारी शब्दावली अन्तर्राष्ट्रीय कही जाने वाली शब्दावली रही तो शिक्षा का स्तर उठने वाला है ? शिक्षा का स्तर गिरने का मुख्य कारण यह है कि हमारी शिक्षा का माध्यम एक विदेशी भाषा है और इस बात को मैंने जो अभी उदाहरण आप के इस प्रतिवेदन से पढ़े उन से भी स्पष्ट जाना जाता है ।

अब मैं कुछ दूसरी बातें आप से निवेदन करना चाहता हूं । शिक्षक जो हैं हमारे यहां उन की शिक्षक-वृत्ति आर्थिक दृष्टि से समृद्ध होनी चाहिए जिस से ठीक व्यक्ति मिल सकें । आज क्या होता है ? आज वही विषय पढ़ाने वाले अगर अंग्रेजी के शिक्षक हैं तो उन को एक वेतन मिलता है, हिन्दी और भारतीय भाषा के जो शिक्षक हैं उन को एक वेतन मिलता है । मेरे पास कुछ पत्र इस सम्बन्ध में आये हैं । एक पत्र पंजाब से आया है, उस में लिखा हुआ है कि अंग्रेजी भाषा बोलने वाले अध्यापकों को 220 रु० से 500 रु० का ग्रेड मिला है और हिन्दी, पंजाबी बोलने वाले अभागे अध्यापकों को 125 रु० से 300 रु० का ग्रेड मिला है । यह राज्यभाषा तथा प्रान्तीय भाषाओं का घोर अपमान है । एक ही कार्य करने वाला अंग्रेजी भाषा का शिक्षक एक वेतन पाये और वही कार्य करने-वाला हिन्दी या दूसरी भारतीय भाषाओं का शिक्षक दूसरे प्रकार का वेतन पाये, इन का एक ग्रेड और दूसरे का दूसरा ग्रेड रहे, यह मेरी समझ के बाहर की बात है, यह कैसे रह सकता है ।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूं वह विद्यार्थी आन्दोलन के सम्बन्ध में है । इस के अन्य कई कारण होते हुए भी मुख्य कारण विद्यार्थी आन्दोलन का मेरी दृष्टि से यह है कि विद्यार्थियों को अपने शिक्षकों के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है । तो जब शिक्षक श्रद्धा योग्य होंगे, तभी उन पर श्रद्धा रह सकती है । हमारे पुराने गुरुकुलों में ऋषि-मुनियों के ऊपर क्यों इतनी श्रद्धा रहती थी—इस लिये कि वे त्यागी थे, वे विद्वान थे, उन्होंने समाज और विद्यार्थियों के लिये अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया था । इस समय जब शिक्षकों की यह स्थिति है कि पर्याप्त वेतन न होने के कारण उस क्षेत्र में योग्य व्यक्ति नहीं जाते, और त्याग की तो कोई भावना उनमें है ही नहीं तब ऐसे शिक्षकों के प्रति यदि विद्यार्थियों में श्रद्धा नहीं है तो तो एक स्वाभाविक बात है ।

अब मैं एक और विषय की ओर आप का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं । यह

[र्माण का युग है। स्वतन्त्रता के बाद हमारे देश का निर्माण हो रहा है। इस निर्माण में दो प्रकार का निर्माण है—एक भौतिक वस्तुओं का निर्माण है, हम को अधिक अन्न चाहिये, अधिक कपड़ा चाहिये, जिन्दगी की जरूरियात की दूसरी चीजें चाहियें और दूसरी ओर हमारी नई पीढ़ी का निर्माण है। नई पीढ़ी के निर्माण के सम्बन्ध में मेरा कथन है कि उस निर्माण में जब तक अध्यात्मिकता का पुट नहीं होगा, तब तक वह निर्माण जैसा होना चाहिए वैसा नहीं हो सकेगा। हम ने इन पंचवर्षीय योजनाओं में भी देख लिया, कि केवल भौतिकता के ऊपर निर्भर रहने से हमारा कल्याण नहीं है। जब तक हमारी भौतिकता का भवन अध्यात्मिकता की नींव पर नहीं होगा, तब तक हमारा काम चलने वाला नहीं है। हम साम्प्रदायिक एकता चाहते हैं, हम इस तरह के व्यक्तियों को उत्पन्न करना चाहते हैं जो नैतिक हों, यह कब हो सकता है? यह तब हो सकता है जब कि यह निर्माण अध्यात्मिकता के स्तर पर हो। हजारों वर्ष हमारे पहले ऋषि-महर्षियों ने, हमारे तत्व-वेत्ताओं ने, हमारे दार्शनिकों ने, हमारे संतों ने, हमारे भक्तों ने एक बात की खोज की थी—यथार्थ में यह समस्त सृष्टि एक ही तत्व है। हजारों वर्षों के बीत जाने के बाद भी आज के वैज्ञानिक इस खोज के आगे नहीं जा पाये हैं। आज के वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार करते हैं कि यह सृष्टि एक ही तत्व है। इसी खोज के बाद हमारे वेदान्त के कुछ सूत्र बने हैं—

अहम् ब्रह्मास्मि	—मैं ब्रह्म हूं।
तत्वमसि	—तुम भी वही हो।
सर्वंम्खल्विद्म ब्रह्म	—सब कुछ ब्रह्म है। है।
वसुधेव कुटुम्बकम्	—सब हमारा कुटुम्ब है।

सर्व भूत हिते रतः —सब भूतों के हित में रत रहना हमारा कर्तव्य है। सुख में नहीं, हित में, क्योंकि सब को सुख नहीं पहुंचाया जा सकता, परन्तु सब के हित का काम किया जा सकता है। जब तक हम अध्यात्मिकता के स्तर पर अपना निर्माण नहीं करेंगे, तब तक न हमारा, न हमारे देश का कल्याण हो सकता है और न विश्व का कल्याण हो सकता है। नैतिकता इसी के ऊपर निर्भर है।

श्री श्रीप्रकाश जी की अध्यक्षता में एक कमेटी बनी थी, उस ने भी इस सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा है। मैं शिक्षा मंत्री जी से, जो बड़े देश भक्त हैं, जिनका देश के इन विषयों से बड़ा अनुराग है, कहना चाहता हूं कि वे शिक्षा में अध्यात्मिकता भी लायें।

अन्त में यह कहूंगा कि उन्होंने जो एक बात की घोषणा की है कि वे विश्वविद्यालय तक शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओं को बनाना चाहते हैं, इस का मैं हृदय से समर्थन करता हूं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने भी इस को स्वीकार किया है। लेकिन वह कोई नई बात नहीं कह रहे हैं। सरकार की यह नीति जब श्री कालू लाल श्रीमाली हमारे शिक्षा मंत्री थे, तब भी घोषित हो चुकी थी, लेकिन हम देखते हैं कि उस घोषणा के बावजूद भी मामला वहीं पड़ा हुआ है और अब भी यह निश्चित नहीं हो पाया है कि आखिर शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएं कब तक हो जायेंगी। मुझे इस बात का भय है कि श्री त्रिगुण सेन जी की इस घोषणा के बाद भी कहीं यह न हो कि जिस प्रकार श्रीमाली जी की घोषणायें केवल कागजों में रह गईं, वे घोषणायें केवल अलमारियों के सजाने के काम में रह गईं, उसी प्रकार उनकी घोषणा भी इसी प्रकार रह जाय और शिक्षा के माध्यम में अंग्रेजी भाषा उसी प्रकार चलती रहे, जिस प्रकार आज तक चलती रही है।

सब मिला कर शिक्षा आयोग की सिफारिशों का, कुछ बातों के सिवा, अच्छा असर पड़ेगा —ऐसा मेरा विश्वास है। मुझे यकीन है कि और कोई आयोग अब भविष्य में नहीं बैठेगा तथा राधाकृष्ण आयोग व दूसरे जो आयोग

[डा० गोविन्द दास]

और समितियां बनी हैं, उन की जो सिफारिशें हैं, उन को भी कार्यक्रम में परिणित किया जायेगा।

SHRI LOBO PRABHU (Udipi) : Mr. Chairman, Sir, I have already moved an amendment standing in my name, and I now wish to speak on the motion of the Minister of Education. Before I proceed, I would like to explain that what I understood from the very high-flown Hindi of our revered father of the House was that this discussion on the Education Commission's Report and the Parliamentary Committees' Report is going to turn largely on the language issue, on the question whether Hindi should be the link language or the official language. I would like to say that there will be an opportunity to discuss it and on this occasion, when we are discussing a very important document, a document of nearly 700 pages involving the assistance of 18 experts, we should not allow this language issue, this Hindi issue to obscure our thoughts and deliberations. I would also like to explain at this stage that I have no antipathy to Hindi. I have spent the best part of my life in service, 20 years in UP and Delhi. I know this language, I may be pardoned for saying this, better than any of my fellow members from the South. I also wish to say this that my best friends come from the Hindi areas. Therefore, if I oppose or question the right of Hindi, it will be only on this ground that it does not serve the country as well as it serves me. I have no objection to Hindi, I am all for Hindi, as far as my friends are concerned, as far as my own conversation is concerned, but I am not for Hindi if it does prejudice the relations of the different parts of the country, and whatever I say about Hindi will be in the strict context of this Report, of the necessities of education.

I may begin by saying that I have the highest respect for the experts assembled in the Education Commission. I have also, without doubt, great respect for our worthy colleagues who were assembled in the Parliamentary Committee, but I feel that their findings could have been different and there are reasons in my mind for this.

In the first place, much of the information about the condition of our education was not available to the Commission. I have obtained from the Minister of Education, after a great deal of correspondence, a report of the Second Survey of the Educational System in this country, released on August 19th, of which the Chairman was the Minister of Transport and Shipping, Dr. V. K. R. V. Rao. Now, that Report is a factual record of the condition of education in this country. If that report had been available to the Education Commission, it would not have proceeded with the superstructure of education; it would have considered the foundations of education which are dealt with in this Report.

So, I feel that to the extent the factual basis was lacking in the consideration of the Education Commission's Report, there is a case for re-opening many of their conclusions.

Secondly, I feel that the Education Commissions Report covers such a vast canvas that it was almost impossible for any Government, for any system of education, to deal with a few of their conclusions. In this I am confirmed because the Parliamentary Committee had chosen a very small number of the multitude of recommendations of this Commission and even out of those recommendations, they have passed on some of the recommendations to be considered at a future date which has not been specified. It means that this Committee felt that the Report as such was too big and, therefore, it represented a kind of effort which was not quite appropriate for consideration at the present time.

Thirdly, I feel that although there were so many experts, although there was so much evidence, the conclusions reached did not consider the possible development of their implementation. I will illustrate this as I go along.

I would like to take up first the Second Survey. The Second Survey indicates that in spite of the constitutional provision, in this year of grace, only 73.2 per cent of the boys and girls between 6 to 10 years of age are enrolled in our schools. We have, therefore, to do something to clear this back-log before we think of higher education, before we think of sophistication. The question is : What are we doing about it ? I may mention—I am sorry the Father of

the House is absent—that this 73.2 per cent has been reached only by the non-Hindi States in the south. The actual averages of the Hindi-speaking States are very disappointing. In Madhya Pradesh, the average is only 56.6 per cent and in Bihar, it is 46.2 per cent. It is a legitimate question from the people of south telling the people of the Hindi-speaking States, "Please educate your people first before your attempt to educate us in Hindi." I am not saying this in any carping spirit. I am saying this because I want the hon. Minister of Education to pay special attention to the teaching of Hindi in these areas. That will strengthen the case of Hindi elsewhere. Let them come somewhere nearer the average of 73.2 per cent and then they will have demonstrated that Hindi is a language very easy to learn, Hindi is a language which is capable of being appreciated by those of whom it is a mother tongue....

SHRI ONKARLAL BOHRA (Chittorgarh) : You are also touching the language issue.

SHRI LOBO PRABHU : I have said this will be only to the extent it is necessary for me to examine the Report and I would request you to please not to interrupt me.

Now, I come to the second big disclosure made by this Report. You would think that with 73.2 per cent of enrolment, we are doing very well. But you will be surprised to know that of the 73.2 per cent, only 1/4th become literate. These are drop-outs from the 1st to the 4th standard. Three-fourths of the students drop out : either they give up or they just do not complete the course. It means that 75 per cent of the expenditure on education is a waste. The hon. Minister, no doubt, said that the Government is not generous to education. May I suggest to him, if he wants some means of avoiding this waste of 75 per cent of the expenditure on education, there are ways of doing it ? There could be a shift system so that the economic utilities are achieved; there can be a rotational system and all that. I do not think I have sufficient time at my disposal to enumerate all that. The Minister has to consider all that.

Then, the third big deficiency is that in the rural areas, as many as 35.3 per cent of the schools have a single teacher. That is bad enough. Then, there are what are called multiple classes, that is, one teacher taking more than one class. This raises the percentage to 79. Can we think of anything else when you have not got enough teachers to teach your children ?

Coming to the question of training of teachers, it will surprise you that in the primary stages, only 33.2 per cent of the teachers are trained. We are thinking of doing other things. Why can't we think of training these people ?

What is the position about the school buildings ? Six sq. ft., the size of a grave or less, is the average space allowed for every student in the country. I am sorry to mention—my hon. friend, Dr. Govind Das is absent—that U.P. has the lowest record, just 3 sq. ft. per child. When you cannot do more in the way of buildings for your children, is it time to think of other sophistications ?

I would like to say that I am genuinely interested in this subject. If I make any criticism, it is on behalf of the people. The Report of this Commission, in my view, is very unfair to the Hindus. Why ? If you read the Constitution, the minorities are exempt from any interference by Government under Article 30 in their right to establish and administer educational institutions of their choice and in the matter of language. What would be the result ? The minorities could maintain any school as they like, in any language they like without any interference from the Government unless the Constitution is changed. The Constitution cannot be changed because it is one of the fundamental rights. It means that it is the Hindus who are now being condemned to a less efficient system of education.

Now, you may question my statement that the system of education is less efficient. You may just go round any English-medium school at the time of admissions. You will see—I will not mention names—that every single person will be queuing up to get a seat for his child in an English-medium school. They are not fools; they know the value of the English-medium education. You are, therefore, favouring the rich who can afford to have an English-medium education. You are discriminating against the

[Shri Lobo Prabhu]

poor—the Hindus first; the poor next. This is the meaning of a change in language from English to regional language.

Then, I would like to say that the Report is an attack on education itself. If you read the Report—I wonder if anyone has read it —you will find that in the opening paragraphs it is related to national integration, democracy, productivity and a host of other things except education.

These are the things which are the result of education. They are not the reasons for education. You need not teach patriotism to an English-man; his education instils that in him. The moment you begin to teach patriotism, you are implying that it does not exist. You are making the people think that it is a quality which has to be forced. So, the whole approach is wrong. The purpose of education is three-fold : first, intellectual discipline; the second, acquisition of knowledge; and the third, a spirit for new ideas. There is no evidence in this Report that the system proposed has any relation to these criteria of education.

Thirdly, I would like to say that this Report is against public opinion. Government can create any kind of public opinion. It can summon Vice-Chancellors and say, "Do agree with this". Vice-Chancellors after all, I may remind some of you are nothing but a part of the whole system of authority. Without the Syndicate or the Senate, no Vice-Chancellor can commit his University to anything, and if any Vice-Chancellor has committed himself, I think he is quite wrong. But that is not public opinion. The public opinion is first of the parents; they are the people who are vitally interested in the education of their children; then public opinion is of the students themselves; they are thinking of their future; and then of the teachers. In this connection, I may state that in my Constituency, in Man'pal,—you must have heard about it—an American educationist held an opinion poll and he found that 86% of the students were for English-medium in the University, 82% of the teachers were for the English-medium in the University and about 79% of the parents were also for the same thing. A copy of that Report has been received by some Members of Parliament and also by the Minister. I asked Dr. Manefee to send a copy of this Report to him so that he may be able to check his conclusions and also hold an opinion poll in other universities. I know, some opinion poll has been held in Madras also and I venture to guess that if an opinion poll were held in U.P., the heart of Hindi land, the students would be vociferously for English. (*Interruptions*)

SHRI BAL RAJ MADHOK (South Delhi) : No; he is sadly mistaken.

SHRI LOBO PRABHU : Let us put it to the test. Let us go to the Lucknow University or any other neutral University. I would not go to Banaras or Aligarh-Muslim University, which is committed to a certain view. We can go to a neutral University and have an opinion poll.

SHRI BAL RAJ MADHOK : Students, not University.

SHRI LOBO PRABHU : Yes. I have no objection. Mr. Madhok's suggestion is one highly acceptable. Let us have a test. I tell you, I am sorry for my people from U.P. Today everywhere in employment, either in the public sector or in the private sector, the U.P. people who at one time had a leadership are nowhere. See the results of any examination. You have wronged these boys; you have deprived them of their proper education that would have entitled them to the right to employment. . . . (*Interruptions*). The Prime Minister, I do not think, went to any U.P. school.

SHRI PILOO MODY (Godhra) : Education is not a qualification for Prime Ministership... (*Interruptions*)

SHRI LOBO PRABHU : May I be spared of these interruptions ?

MR. CHAIRMAN : Order, order.

SHRI LOBO PRABHU : I would, therefore, suggest on behalf of my good friends, whom I love, from U.P. that an opinion poll be held. Find out what they want. The politicians are not the barometers of public opinion. . . . (*Interruptions*).

SHRI SHEO NARAIN (Basti): Are the ICS officers the barometers of public opinion ?

SHRI LOBO PRABHU : The ICS officer is here in the same way as the hon. Member is here. I have not come here by any examination.

सभापति महोदय : माननीय श्री शिव नारायण ऐसी बात न कहें ।

SHRI LOBO PRABHU : Some men must be put right. Let my hon. friend please note that I have not come here because of the ICS, I have come here by the same democratic process as he himself has come.

AN HON. MEMBER : We were referring to the ICS mentality.

SHRI LOBO PRABHU : What am I to say ? That is the position. This report wrongs those whom it attempts to serve. Please remember that I am not saying this to score a point, but I am saying this because I love the people of Hindustan, because I love my country and because I want my country to improve in its education.

SHRI YASHPAL SINGH *rose*—

सभापति महोदय : अगर माननीय सदस्य कहते हैं कि उन को कल जाना है तो किसी और वक्त बोल लें ।

श्री यशपाल सिंह (देहरादून) : मेरा टाप-मोस्ट अमेंडमेंट है । इस लिये मैं थोड़ी-सी प्रार्थना करना चाहता हूं ।

SHRI M. L. SONDHI (New Delhi) : May I submit that I was to have been called ? You have said that it is a matter of so much importance and you have first asked the Swatantra Party Member to speak. Now, our group has to be called.

16.37 HRS.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय सदस्य पांच मिनट में समाप्त करें ।

SHRI M. L. SONDHI : Let him have even 20 minutes then.

SHRI BAL RAJ MADHOK : My submission is that even if you may have to adjourn the House five minutes later, Shri M. L. Sondhi may be allowed to finish his speech today; he should not be made to speak for ten minutes today and for ten minutes tomorrow.

MR. DEPUTY-SPEAKER : We are adjourning today at 5 p.m. Since Shri Yashpal Singh will not be here tomorrow, as the Chair has already said....

SHRI M. L. SONDHI : No, I had raised my objection immediately. It is for you, Sir, now to take an independent decision.

MR. DEPUTY-SPEAKER : What I would suggest is that if it is not inconvenient to Shri M. L. Sondhi, he may allow Shri Yashpal Singh to speak today.

SHRI M. L. SONDHI : It is inconvenient. Then, I would prefer to speak tomorrow.

श्री यशपाल सिंह : मैं श्री सोंधी का बहुत आभारी हूं.....

MR. DEPUTY-SPEAKER : I would like to know from Shri Bal Raj Madhok whether it would be difficult to accommodate Shri Yashpal Singh today.

SHRI BAL RAJ MADHOK : If he is going to speak only for five minutes, then let him speak.

MR. DEPUTY SPEAKER : Now, Shri Yashpal Singh. He should take just five minutes only.

श्री यशपाल सिंह : उपाध्यक्ष महोदय, मैं कई दिन से सोच रहा था कि थोड़ा मौका मिले, इस पर अपने विचार प्रकट करने का । मैं माननीय मंत्री श्री त्रिगुण सेन को बहुत-बहुत कांग्रेचुलेट करता हूं कि हम जिस चीज की प्रतीक्षा दो साल से कर रहे थे, उस को वह यहां लाये । साथ ही मैं जन संघ के माननीय सदस्य का भी आभारी हूं कि उन्होंने मुझे बोलने के लिये अलाऊ किया ।

इस में जो तस्वीर दिखलाई गई है, दर-असल वह तस्वीर नहीं है ।

अंग्रेजी बोलनेवालों की तादाद तो इस देश में 5 प्रतिशत भी नहीं है

एक माननीय सदस्य : दो प्रतिशत ।

श्री यशपाल सिंह : यहां पर नकल करने-वाले लोग ज़रूर हैं । आज लोग नकल करते हैं और गलत तरीके पर चलते हैं । आज देश की गिरावट का सब से बड़ा कारण यह है कि आज भी हमारे यहां योजनायें अंग्रेज़ी में आती हैं । इस देश में अब इस कलंक को और ज्यादा बर्दाश्त नहीं किया जा सकता ।

मुझे उन लोगों की अक्ल पर आश्चर्य होता है जो लोग अपनी प्रादेशिक भाषा के लिये नहीं लड़ते । अगर माननीय श्री रंगा अपनी प्रादेशिक भाषा के लिये नहीं लड़ेंगे, रीजनल लैंग्वेज के लिये नहीं लड़ेंगे, तो यह कहां तक ठीक हो सकता है । आज यहां पर उन लोगों की भाषा को अपनाने पर ज़ोर दिया जा रहा है जिन्होंने हम को दो सौ सालों तक गुलाम बनाये रखा । गांधी जी की कृपा से यह हुआ कि हमें उस से आजादी मिली । लेकिन आज फिर उस को दूसरी तरफ से लाया जा रहा है । जो लोग यह कहते हैं कि प्रादेशिक भाषाएं लादी नहीं जायेंगी, उन लोगों से मेरा निवेदन है कि इस में लादने का कोई सवाल नहीं है । जो भी हमारी रीजनल लैंग्वेजेज़ हैं, उन को लादने का सवाल नहीं है, उन का ताल्लुक हमारे निर्माण के साथ है, हमारे देश के भविष्य के साथ है । अगर हमारी मां जबर्दस्ती दूध न पिलाती तो हम हर्गिज़ जवान नहीं हो सकते थे । हमारी मां हमारे ऊपर कोट लादती थी और हम दूर-दूर भागते थे । मैं अपनी मां की भर्त्सना करता था कि वह मेरे ऊपर जबर्दस्ती कोट लादती थी । इस लिये मैं कहना चाहता हूं कि जो हमारी राष्ट्र भाषा है उसका ताल्लुक सिर्फ हमारी भाषा के साथ ही नहीं है, हमारे देश के निर्माण के साथ है ।

अभी माननीय सदस्य ने जो बात कही है उस को सुन कर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ है । उन्होंने अंग्रेज़ी जबान की हमेशा गुलामी की है । माननीय सदस्य ने अंग्रेज़ी की कृपा से ही यह जगह हासिल की है, अंग्रेज़ी की गुलामी करके ही हासिल की है । बीस साल के बाद भी अगर आप रिजनल लैंग्वेजिज के लिये नहीं लड़ सकते हैं, बीस साल के बाद भी अगर आप राष्ट्र भाषा के लिये नहीं लड़ सकते हैं तो देश का निर्माण हर्गिज़ नहीं हो सकता है । हमारी गिरावट का सब से बड़ा कारण ही यही रहा है कि हम ने अपनी भाषाओं को नहीं अपनाया है । मेरी दरख्वास्त है कि अगर आप यह सोचते रहे कि आहिस्ता-आहिस्ता ये भाषाएं आयेंगी तो याद रखिये कि हिन्दी सौ साल तक नहीं आ सकेगी, रिजनल लैंग्वेजिज़ सौ साल तक नहीं आ सकेंगी । आप देखें कि चीन जब आजाद हुआ, उसी दिन से चीनी भाषा को उसने रायज कर दिया और चीन की दीवारों पर यह लिख दिया गया कि जो अंग्रेज़ी में बोलेगा उस को छः साल की सज़ा दी जायेगी । रशिया ने भी एक दो दिन में निर्णय कर लिया कि उनकी अपनी राष्ट्र भाषा होगी । बर्मा रात के बारह बजे जिस दिन वह आजाद हुआ, उसी दिन के रात के बारह बजे से उसने अपनी जबान को रायज कर दिया । हमारा दुर्भाग्य है कि बीस साल के बाद भी हम विदेशी भाषा की गुलामी कर रहे हैं । अगर सरकार ने इस कलंक को नहीं हटाया, सरकार ने राष्ट्र भाषा को रायज न किया, भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद, महात्मा गांधी, श्री पुरुषोत्तम दास टंडन और सरदार वल्लभ भाई पटेल की आवाज को न सुना, उनकी आत्मा के साथ धोखा किया तो मैं कहता हूं कि जो हाल आपका नाथुला में हुआ है, जो हाल आपका लद्दाख में हुआ है, जो हाल आपका कैलाश और मानसरोवर में हुआ है, वही आगे भी हो कर रहेगा, आप उस को होने से रोक नहीं सकते हैं ।

आप किस चीज़ के लिये लड़ रहे हैं जब आप की कोई जबान ही नहीं है, कोई कल्चर ही नहीं है । बीस साल से आप एक विदेशी भाषा की गुलामी कर रहे हैं और उसका

नतीजा यह हुआ है कि आज भी आप भिक्षा पात्र ले कर हाथ में इधर-उधर घूमते फिर रहे हैं; भिक्षा पात्र ले कर अनाज मांगते फिरते हैं, हैल्प मांगते फिरते हैं। इस तरह से पचास करोड़ इन्सानों का यह जो देश है यह अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सकता है। इजराईल की दो हजार साल पुरानी भाषा हिब्रू रूट्स जो कि मृतप्राय हो गई थी, जो एक पुरानी भाषा हो गई थी आज फिर एक जीवित भाषा बन गई है। जिस दिन इजराईल वहां पर आया उसी दिन, उसी आधी रात को इस भाषा को उसने सिंहासन के ऊपर बिठाया। वह एक छोटा-सा देश है लेकिन छोटा होते हुए भी आज उसने दुनिया को कमाल करके दिखा दिया है। चीन को आप देखें, रूस को आप देखें, उनकी भाषाओं को देखें कि कितनी उन्नत वे हो गई हैं। हम कहते हैं कि अगर हमने अंग्रेजी को छोड़ दिया तो टैक्नालाजी कहां से आयेगी, इंजीनियरिंग विद्या कहां से आयेगी, न्यू साइंसिस कहां से आवेगी, विज्ञान कहां से आयेगा ? मैं पूछना चाहता हूं कि रूस के बेटे-बेटियों को अंग्रेजी नहीं पढ़नी पड़ी तो भी क्या यह सही नहीं है कि उन्होंने स्पूतनिक को ला कर जमीन पर खड़ा नहीं कर दिया है ? चीन के बेटे-बेटियों को अंग्रेजी की गुलामी नहीं करनी पड़ी तो भी क्या यह सही नहीं है कि आज वह विजेता है, आज वह धमकाता है। इस विदेशी भाषा के कारण हम में बहुत-सी गिरावटें आ गई हैं। मैं माननीय त्रिगुण सेन जी से अर्ज करना चाहता हूं कि इतिहास लिखा जायेगा, इतिहास रोशन होगा यह चीज जरूर कागज के ऊपर आयेगी और इसको आप अपने कार्यकाल में ही, अपने शासन काल में ही रायज कर दें, अपने मंत्रित्व काल में ही इसको आप कर दें। उनका सब से बड़ा कर्त्तव्य यह है कि रिजनल लैंगुएजिज को प्राविंसिस के अन्दर रायज कर दें और हिन्दी को राष्ट्र भाषा कह कर पार्लिमेंट के अन्दर रायज कर दें। यह सब से बड़ी शर्म की बात है, सब से बड़ी लज्जा की बात है, सब से बड़ी धिक्कार की बात है कि आज तक सुप्रीम कोर्ट का एक भी फैसला हिन्दी या रिजनल लैंगुएजिज में से किसी लैंगुएज में नहीं लिखा गया है, आज तक लोक सभा में जो कि सर्वोच्च सत्ता सम्पन्न हमारी इंस्टीट्यशन है, एक भी बिल किसी रिजनल लैंगुएज में या हिन्दी में पेश नहीं किया गया है। इससे बड़ा धिक्कार कोई हो नहीं सकता है। मैं कहूंगा कि हम ने महात्मा गांधी की आत्मा के साथ गद्दारी की है। महात्मा गांधी ने कहा था कि अगर हिन्दी नहीं रहेगी तो स्वराज्य नहीं रहेगा, अगर हिन्दी नहीं रहेगी तो स्वतन्त्रता नहीं रहेगी। किस आदर्श को ले कर आप आज हकूमत को चला रहे हैं ?

उपाध्यक्ष महोदय, मैंने एक एमेंडमेंट दी है। उस में मैंने कहा है कि हमारी जो मातृभाषा है उस के साथ हम ने कोई मजबूरी का सौदा नहीं करना है। युद्ध की तैयारी मजबूरी का सौदा नहीं है। वह कोई टाईम पालिटिक्स नहीं है। वह हमारा धर्म है। इफ यू वांट पीस, बी प्रिपेयर्ड फार वार। यह हमारा धर्म है, हमारे देश के अस्तित्व का, हमारी आत्म रक्षा का, हमारे देश के स्वाभिमान का सवाल है। गीता माता का हुकम है :

सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ, लभन्ते युद्धमीदृशम्।

जो कौम नपुंसक होती है, जो कौम स्वाभिमान रहित होती है, अभिमान रहित होती है, जो परास्त हो जाती है, जो डिफीटिड नेशन होती है वह दस्तखत ही किया करती है पंचशील के ऊपर। हमारा धर्म देश की रक्षा करने का है, हमारा धर्म मातृभाषा की रक्षा करने का है, हमारा धर्म कैलाश और मानसरोवर को वापिस लेने का है। यह किसी कम्प्रोमाइज से नहीं हो सकता है। यह जिस दिन होगा मातृभाषा के माध्यम से ही होगा, हमारी संस्कृति की रक्षा से ही होगा। अगर युद्ध की शिक्षा न दी गई, अगर सैनिक शिक्षा न दी गई तो आप की जो तालीम है वह अधूरी रह जायेगी। गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने तथा

दूसरों ने राष्ट्र भाषा को जगाया था, राष्ट्र के सम्मान को जगाया था । मैं अधिक समय लेना नहीं चाहता । बीस साल की शिक्षा का नतीजा जो कुछ हुआ है वह पराजय हुआ है, शिकस्त हुआ है । इस को बदल दीजिये । इट इज नैवर टू लेट टू मैंड । राष्ट्र भाषा को सम्मानित करिये । अगर आपने ऐसा किया तो कोटि-कोटि जनता जो कि माननीय त्रिगुण सेन जी से बड़ी भारी उम्मीदें रखती है, उसकी ये उम्मीदें पूरी होंगी । मैं प्रार्थना करता हूं कि अपने ही कार्यकाल में आप राष्ट्र भाषा और प्रादेशिक भाषाओं को लायें ।

SHRI M. L. SONDHI (New Delhi) : When I first saw the report which is under discussion today, I was reminded of the words of the sage of Dakshineshwar, "The almanac may forecast 20 measures of rain, but you do not get a drop by squeezing its pages."

When we look at the Education Commission's report, we become aware first of all of what I would call the drought conditions in the educational soil of our land. Our land is parched and it needs irrigation. The task before the Education Ministry is, therefore, one of developing a programme which can restore to us a sense of adequacy, a sense of true national values, and a sense of pride that this ancient land which was once known as the teacher of mankind shall again become a light unto the world.

Therefore, the starting point for our discussion must be, I beg to submit, and with deference to the views which have been expressed from this side of the House, pride in our national values, pride in our traditions and pride in our classical language, Sanskrit.

Indeed, I would begin on a personal note. I am speaking English, but I say it plainly that I use English as a medicine. I do not use it as a source of nourishment. Nourishment must come from that traditional culture, that Sanskritic culture, in whatever way we can accommodate it to the necessities of today in keeping with the technological future of this country.

If I may be allowed to continue the personal note, my son who is just four years old, is learning and has learnt Sanskrit, Tamil, English and Hindi. I think that those of the younger generation who will come after us will laugh at us one day, they will think that we discussed these problems in a mood of being upset by small criticisms from abroad.

I am told on authority that India is passing through a dangerous decade. This word which was invented by, I think, a very ordinary American journalist became the gospel of the establishment of this country. Therefore, let us, first of all, have the mentality of freedom.

I spent some time in the countries of the world which are inhabited by the Slavs. I refer to the Czechs, Yugoslavs, Slovaks and the Poles. There, I saw their pride in language, pride in culture, and pride in their civilisation. The same problems arose in Czechoslovakia when it became free. German was used by everybody there, and today Czechoslovakia is a country of the world where the Czech and Slovak languages are flourishing. I have seen queues for many commodities, but it was in Czechoslovakia that I have seen people queueing for books and periodicals contributed by the minds of their authors with that pride in their culture and civilisation.

I would, therefore, look upon this whole question in that context. Let us not talk from some high pedestal to the Hindi people or to the Tamil people or to the Maharashtrians or Gujaratis or Bengalis. Let us talk as one people, let us understand that there are certain reasons why certain parts of our country are backward. After all, in the year 1857 it was these areas which were discriminated against, and a whole group of people were made into gardeners and grass-cutters because they dared to raise the head of India high in the face of the alien conqueror.

Therefore, when we talk of education, let us resurrect in our mind a feeling of greatness in our ideals. Let us indeed talk of Comenius who brought the ideal of education to Central Europe, of Pestalozzi, of Geheed, of our own great educationist Gurudev Rabindranath Tagore. In that con-

text, does it not occur to us that a small group of people who are educated in public schools are in fact the ruling elite of this country? Does it not occur to us that our democracy has no meaning till ideals fertilise the entire nation, till the spirit of the freedom of education is abroad? We do not want the public schools to go down to some low levels, but we want to develop this race as a whole. We want levelling up, and it is in that context that we must demand from our Ministry of Education, the action to give this land a proper system of schooling, based upon national values, based upon national ideologies and on a national achievement motive. I would, therefore, first of all refer to the problem which has been known as a problem of brain-drain: talented and experienced Indians are working in foreign countries. Sometimes they merely make a brave face about it. They suffer ignominy; they suffer humiliation, but they are proud of the fact that they are away from a land which it has become the fashion to call a benighted land. Let us get them back to our land. Our country has produced the best minds of the world; it is a land which has produced Jagadish Chandra Bose; Sir C. V. Raman; it has produced Ramanujam; it has produced Narlikar. But Narlikar is still away. The predecessor in office, of the present Minister, made a good show of receiving Narlikar when he came to India, but nothing came out of it. Indeed, I am reminded of the dismal failure of his foreign policy and in other fields. Therefore, I will forgive him of the failures in the educational field. Therefore, I have that sense of deep humiliation. My experience in Prague is this: I saw the delegation in an international conference on semi-conductors. There, I found the leader of the United States delegation was an Indian; an Indian from "backward" U.P.; he was a person who was regarded as an expert in the field of semi-conductors and this unfortunate person told me that he had come to India, gone from door to door and said that he was an expert in this field of science but yet nobody cared for him. He went away to America, got American citizenship, where he is feeling deeply hurt and resentful about the various social problems of America, but still since his own country rejected him, he went to that distant land. Therefore, let us look at it in terms of certain precedents and examples of behaviour: *Yatha Raja, thatha Praja,* If this is the way, if the highest in the land send their children for even being trained as motor mechanics, in some foreign land, what is the position? Are there not enough places here where people can be trained? What inspiration we could derive if those who can learn to work with their hands do not work here, if they do not have a sense of dignity of labour in our own way? I have a feeling that what is needed is an effective cultural policy. Let us beware of the mass culture that confronts us; they still come to us and it has gone to other countries also—television, radio and other means of mass communication, and that has resulted in a process of industrialisation and also urbanisation.

What the Minister of Education is called upon to do is to anticipate the difficulties which will arise in future. We do not want that gangsterism and that juvenile delinquency and the whole attitude of mind which we face in the beatles and the hippies and other narcotic dealers of the world. We want our country to be a country, a world, of dignity, of freedom, and of aspiration, in consonance with those highest ideals which were found in our ancient culture and literature.

But these are big words. What is the condition of teachers? Permit me to say that even in the city of Delhi, which should be a model of India, the then Education Minister claimed that Delhi would be made India's show-window for the rest of the country. But then what is the condition of the teachers here? I know there is an impending strike notice of which you are aware, and the teachers have been so responsible that they taught on Sundays in order to prepare themselves to face the public when they are criticised for going on strike. I have gone into this matter, and I am convinced that if ever the teachers have a rightful claim, they have that claim in Delhi. It is a challenge to the Education Minister. Will he stand up to the Finance Minister and to the High Command of the ruling party and go down, as it were, even at the cost of losing his office if the claim of the teachers is not upheld? Delhi is the test case, and therefore, if the demand is not fulfilled here, I do not know what the Minister means when he talks of love of the motherland.

The Minister, when speaking in the other House, waxed eloquent on the fact that there should be love of motherland. How can it be, if we have not created an atmosphere of swarajya ? How can we have standards of teaching unless Indians feel that the climate and atmosphere of our universities is such that enables an Indian contribution to knowledge ? How can our higher institutions of study have that spirit of democracy and of swarajya, which we were told would one day be in this world ? Instead of that, we find a highly bureaucratised atmosphere in which research is now being organised as if it were a sort of industry. Must we also, while claiming to modernise ourselves, imbibe all the ills which western civilisation has provided ?

Then, I come to the question of student service, to which the Report refers--the question of treating students in some way different from that in which an alien society treated its servile colonial service. How is it going to be done ? How are we going to sympathise with the aspirations of youth ? Not with that mentality which goes into the making of a District Magistrate, always looking upon every problem as a problem of law and order, but with that outlook which symbolises the aspirations of youth, to think in terms of creative freedom, in terms of fashioning this life in some environment in which human values of independence and freedom will come up.

Then, we are told that there is the question of Hindi language. We in the Jan Sangh are prepared for a dialogue with the Dravida Munnetra Kazhagam on the basis of friendship and ability to understand each other's difficulties and also to learn and to teach each other whatever can serve the best interests of our country. But let us not confuse myths and realities. It is the essential unity of India which must be stressed. Indeed, Tamil culture is second to none in having contributed to that composite culture of India. When we say that all regional languages should be the media of instruction, we are not acting as people who are out to score a political game. We are really trying to find out whether in a free environment, individuals and societies can come into their own much as other countries have developed their own aspirations in an appropriate political climate.

We want Hindi medium institutions in all parts of the country, but not to disturb the peace of mind of others. We want that because we feel that it is being realistic. When I refer to those Sanskrit values, I do not refer to them in an exclusive sense. Indeed, Professor Borough of Balliol College at Oxford thinks that there is a very important Tamil contribution to the Sanskrit culture itself. In suggesting a national approach, I would warn that there are risks in adopting new-fangled ideas and always depending on outside experts. That is my chief grievance against this report. I was a little dismayed when the Education Minister, instead of giving us the profit of his company to discuss matters, made a trip to a distant land to seek wisdom there, just as the heroes of *Mahabharata* used to go abroad to get *Brahmastra*. I am sorry I have to say some unkind words about the Soviet secondary school system, which I think is in a state of flux. We do not have to learn from the Soviet Union. We have to teach the Soviet Union. I say with all humility, the recommendations in Chapter II that work experience involves a sense of participation in productive work, etc. sound very well in print, but what does it mean in actual action ? I was dismayed to find that the only book quoted by the Report is *Polytechnical Education in USSR* edited by Shapovalenko. This is an old book and much water has flowed down the Volga and Ganga and indeed the Jumna here since then. I would warn the minister that the Soviet school reform on which much of the work of the commission is based has been regarded by Soviet experts themselves as having failed to bear out the expectations they had. There is much criticism in the USSR itself. I will quote from *Komsomolskaya Pravada* dated 18th January 1964 :

> "Some five years have passed since the law concerning polytechnisation was adopted but in many schools there is no real basis for production practice, and the method of 'over the shoulder training' still prevails. There are schools in which the two days of production practice are lost days, days of idleness. Teachers are not alone in understanding the bad effect these two days have on children when they are expected to work, but in fact do not work."

Sir, I have further quotations which I will not read.

17 Hrs.

MR. DEPUTY-SPEAKER : Initially I told him that he will have to finish at 5.00. I have to adjourn the House at 5.00.

SHRI M. L. SONDHI : Sir, I will take only two more minutes.

The 1958 programme of school reform which influenced the mind, as I said, has been acknowledged as a costly failure in the Soviet Union. The question I would like to ask is, will it succeed in India ? How is India going to avoid the real problems which even the Soviet educators are facing, problems which were referred to by the preceding speaker ? We share the Soviet objective of universalism, but fifty years after their revolution they have not achieved the objective. India, therefore, must think for itself, must think in its own environment on its own basis. And indeed, if I may, finally, remind the hon. Minister, this year Soviet schools are introducing elective subjects geared to special interest of students in senior schools. The Soviet newspaper commenting on this has said that in course of time this will take as many as 18 hours a week. This is important. The Soviet pendulum, I think is swinging in the other direction. What happens in India ? When we try to be modern we just take that side of England or America which is going out of fashion there.

MR. DEPUTY-SPEAKER : I have already exceeded the time. He may continue tomorrow.

BUSINESS ADVISORY COMMITTEE

Eighth Report

श्री अटल बिहारी वाजपेयी (बलरामपुर) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं कार्यवाही सलाहकार समिति की आठवीं रिपोर्ट प्रस्तुत करता हूं ।

17.03 Hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Wednesday, November 15, 1967/Kartika 24, 1889 (Saka).

77LSS(CP)/67—GIPF